अभिज्ञान शाकुन्तल में पर्यावरण चेतना

डॉ0 रंजन कुमार पाण्डेय

प्राकृतिक विरासत मानव को ईश्वर की सबसे बड़ी देन है। भारतीय मानस की धार्मिक भावनाओं को वृक्षों, नदियों, पर्वतों तथा जन्तुओं से जोड़कर पर्यावरण से गहरा जुड़ाव प्रस्तुत किया है। प्रकृति एवं मानव का सम्बन्ध आदिकाल से ही है, परन्तु एक ओर जब प्रकृति अपने प्राकृतिक क्रियाकलापों से वातावरण को स्वच्छ रखने का प्रयास करती है, वहीं दूसरी ओर मानव अपनी विकासात्मक क्रियाकलापों द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त करना चाहता है जिससे मानव एवं प्रकृति के बीच संघर्ष शुरू हो जाता है और मानव अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु प्रकृति का अनुचित ढ़ंग से दोहन करने लगता है। परिणाम स्वरूप प्रकृति एवं मानव के बीच प्रदूषण की उत्पत्ति प्रारम्भ होती है।

कालिदास ने प्राकृतिक दृश्यों पर चेतन धर्म का आरोप–प्रत्यारोप करते हुये विविध स्थलों पर स्वाभिव्यक्ति प्रस्तुत की है। उनका मानना है कि मानव के समान ही लतावृक्षादि उसी चैतन्य से चेतन है। मानव अपने सुख–दुःख का रूप प्रकृति में देखता है। प्रकृति भी मानव से संश्लिष्ट है उसके प्रति वह पूर्ण सहानूभूति रखती है, उसके दुःख में दुःखी होती और सुख में आनन्द का अनुभव करती है, कोई भी मानव व्यापार प्रकृति क्षेत्र से बाहर नहीं है। इस प्रकार कवि ने प्रकृति और मानव में घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित किया है।

शकुन्तला के विदा होते समय कण्व तथा उसकी सखियाँ ही नहीं समस्त तपोवन उसके विरह से पीड़ित हो उठता है, जैसा कि प्रियम्बदा कहती है– ''त्वयोपस्थित वियोगस्य तपोवनस्यापि समवस्था दृश्यते।'' शकुन्तला के विदाई के काल में वनवासी चिन्तित हैं कि राजा के पास शकुन्तला क्या वनवासी रूप में जायेगी? उस समय वृक्षों पर निवास करने वाली वन देवताओं ने आभूषण, कौशेय वस्त्र युगल तथा लाक्षारस प्रदान किया।

क्षौमं केनचिदि्न्दुपाण्डुतरूणा.....।[1]

इतना ही नहीं उन्होंने कोकिल रव के द्वारा शकुन्तला को जाने की अनुमति भी प्रदान की है– अनुमतगमना .....।[2]

उस काल में लताओं के आँसू न रूक सके, मयूर नृत्य छोड़कर, हरिनियाँ अर्धचर्बित कुशग्रास को उद्गीर्ण कर उसको देखने लगती हैं– उद्गीर्ण .....।[3]

वनज्योत्सना अपनी शाखा बाहुओं को फैलाकर विदा होती हुई शकुन्तला से भेंट करना चाहती है, क्योंकि अब वह दूर हो जायेगी। शकुन्तला का कृतक पुत्र मृगशावक उसका पल्ला पकड़कर उसे जाने से रोकने लगता है– को नु खल्वेष निवसने में स¥जते। श्यामाकमुष्टि परिवर्धितको जहाति।[4]

मानव का प्रकृति के साथ कितना सम्बन्ध है यह कालिदास के ग्रन्थों के अध्ययन से प्रतीत होता है। शकुन्तला जब तपोवन से जाती है, तब महर्षि कण्व वृक्षों को सम्बोधन करके कहते हैं– पातुं न प्रथमं व्यवसितजलम् .....।[5]

यहाँ चेतन–अचेतन सभी के साथ ऐसी अन्तरंग आत्मीयता, प्रीति और कल्याण का ऐसा बन्धन अन्यत्र दुर्लभ है। शकुन्तला कण्व से कहती है– 'पिताजी, कुटी के पास चरनेवाली, गर्भ के कारण मन्दगति से चलती हुई यह मृगी जब निर्बिध्न पुत्र उत्पन्न करे, तब यह प्रिय संवाद सुनाने के लिए आप कोई दूत अवश्य मेरे पास भेजिएगा। मृग शकुन्तला को पतिगृह जाने से रोकना चाहता है, उस समय शकुन्तला कहती है– ''यह कौन पीछे की ओर से मेरा वस्त्र खींच रहा है। कण्व ने उत्तर दिया बेटी– यस्य त्वया .....।[6]

शाकुन्तल में शकुन्तला की तुलना प्रकृति से की गयी है– अधरः किसलयरागः .....।[7] अधोरोष्ठ नवपल्लव के समान लाल है। दोनों हाथ दो कोमल शाखाओं की भाँति है, आदि। शकुन्तला के आरम्भ में ही जब धनुषबाणधारी राजा ने मृग पर बाण चलाना चाहा, तब ''भो भो राजन्! आश्रम मृगोऽयं न हतव्यो न हन्तव्यः'' यह निषेध ध्वनि सुनाई पड़ती है। उस समय शाकुन्तल काव्य का एक मूल 'सुर' बज उठा। यह निषेध वाक्य, आश्रम–मृग के साथ ही साथ तपस्वी–कन्या शकुन्तला को भी करूण के आवरण में आच्छादित करता है। वैखानस कहते हैं– ''न खलु न खलु बाणः ..... शरास्ते।।[8]

सूर्य एवं चन्द्र के व्यापार से संसार का भाग्य–चक्र नियन्त्रित माना गया है– यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधिनाम् .....।[9]

वैदिक ऋषि को यह स्पष्ट भान था कि पर्यावरण के घटको का मानव स्वास्थ्य एवं आरोग्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि ऋग्वेद में जल और विविध वनस्पतियों औषधियों का अपनी स्वास्थ्य रक्षा हेतु आह्वान करता है। पेड़ों के उच्छेद संभावित असंतुलन से पैदा होने वाले खतरों की स्पष्ट गुँज एक दूसरे स्थल पर सुनाई पड़ती है।[10] इन वृक्षों को समूल नाश नहीं करो क्योंकि ये पशु–पक्षियों एवं अन्य जीवों को शरण देते हैं। जल के विविध औषधीय गुणों की चर्चा करते हुए कहा गया है प्रसन्नता, शक्ति आदि का आधार है।

विश्वविश्रुत महाकवि कालिदास के नाटकों में पर्यावरण चेतना के आलोक में विशद् निरूपण प्राप्त होता है, जहाँ मानव जीवन को स्वस्थ एवं सुखी बनाने के लिए विविध वनस्पतियों, पर्वतों, नदियों तथा आश्रमों के अनेकानेक व्यवहारों का उल्लेख किया है। गंगा की घाटी में, जहाँ वनस्थलियों से भरमार थी, अब कुछ एक वन–खण्ड बच गये हैं। कालिदास के ग्रन्थों के अध्ययन से ज्ञात होता है देश अरण्यों (वनों) की विस्तृत श्रृंखलाओ से भरा था। इन जंगलों और सुविन्यस्त उद्यान तथा पुष्पवाटिकाओं के पौधों की चर्चा प्राप्त होती है।[11]

विभिन्न राजकीय प्रान्तों और जलवायु के साथ वृक्षों को सम्बोधित किया गया है उनके कई समुदाय हो सकते हैं, हिमालय की उपत्यिका में उगने वाले, शुष्क पठार, पर्वत और समतल की उर्वर भूमि में उत्पन्न, सागरतट के तरू और दक्षिण मलाया प्रदेश के जांगल वृक्ष। औषधि शब्द का प्रयोग साधारण और विशिष्ट दोनों अर्थों में हुआ है। साधारण अर्थ में छोटे पौधों के लिए, विशिष्ट अर्थ में पहले वे वनस्पतियाँ आती है। अपराजिता भी एक विशिष्ट बूटि थी जो अभियंत्रित गुटिका के रूप में कलाई अथवा भुजा पर अनिष्ट से रक्षा के लिए बाँधी जाती थी।[12]

हमें प्रलता का एक और लता के अनेक प्रसंग मिलते हैं।[13] सप्तच्छद अथवा सप्तवर्ण वृक्ष के डण्ठल के सात पत्ते होते है। इसके फूलों से एक तीक्ष्ण मद–सी गन्ध निकलती है। यह एक बड़ा पेड़ है और इसकी छाया भी घनी है।[14] सरीष एक उन्नत पेड़ है जिसमें निदाघ में फूल खिलते हैं। कवि के समय इसके फूल भारतीय अंगनाओं के लिए अत्यन्त प्रिय थे।[15]

जम्बु जामुन के नाम से प्रसिद्ध है। मालवा के मध्यभाग और दक्षिण में यह बहुतायत से पाया जाता था। टिनटिकी बड़ा इमली का पेड़ है जिसके फल खट्टे होते हैं।[16]

संस्कृत लेखक शमी में अग्नि का होना मानते थे। अग्निगर्भा शमी का प्रयोग कर कालिदास ने उस मान्यता को दुहराया है।[17] कुरवक ''अम्लान पुष्प की जाति का है। मधुमास में इसमें फल लगते हैं और फलों के रंग इतने गहरे होते हैं कि तुरन्त फीकें नहीं पड़ते, इसका लाल भेद रक्तकुरवक है।[18] अक्षोट हमारा अखरोट है। कम्बोज में ये बहुतायत से पाये जाते थे। इंगुदी एक जंगली वृक्ष है जिसका इंगुआ नाम प्रचलित है। इसके फलों से तेल निकाला जाता था, जिसका प्रयोग आश्रमवासी बैखानस शरीर में लगाने और दीप जलाने के लिए करते थे।[19] सागरतट की अरण्य–मालाओं की नमकीन मिट्टी में उत्पन्न होने वाले वृक्षों में पुन्नाग का उल्लेख है।[20] इस प्रदेश में एला और मरीची भी उत्पन्न होते थे। लवंग, एला तथा मरीची आज के सदृश ही उस समय भी भोज्य पदार्थों में थे।[21]

मल्लिका या नवमल्लिका या नवज्योत्स्ना बहुत ही महत्वपूर्ण पौधे हैं।[22] रजत–पुष्प वाली माधवी एक बसन्त–लता है, जिसकी चर्चा संस्कृत–कवियों ने निरपेक्ष की है। ग्रीष्म ऋतु में इसमें फूल लगते है, जिससे मधुर रस निकलता है। इन लताओं में अतियुक्तलता को संस्कृत कवियों का सर्वाधिक ध्यान तथा प्रशंसा प्राप्त है। महाशय विलियम जोन्स का कथन नितान्त उपयुक्त है, इस लता के पुष्पों की सुगन्ध और सौन्दर्य में वह जादू है जिसने इसको कालिदास और जयदेव की प्रशंसा के योग्य बनाया है। यह एक विस्तृत और सम्पन्न वल्ली है, किन्तु जब इसको कोई अवलम्बन नहीं मिलता तो वह एक कठोर वृक्ष का रूप धारण कर लेती है, जिसकी उन्नत डालियाँ उस अवस्था में आरोहण कर हवा में स्वाभाविक नमनशीलता की प्रवृत्ति प्रदर्शित करती हुई लहराती रहती हैं। श्याम माधवी और अतिमुक्ता वल्लियाँ मनोरम लतागृह का निर्माण करती थी।[23] लताओं में शमीलता के समान काल्पनिक बल्लियों का कवि वर्णन करता है, जो उन्हीं के नामों के वृक्षों के सुकोमल स्कन्धों के कारण कल्पित होती हैं। कालिदास

घटनावश दो वल्लीवर्गों उद्यानलता और वनलता की भिन्नता प्रकट करते लिखते हैं, पहली उद्यान की और दूसरी वन की वल्ली है। श्यामा, माधवी और अतिमुक्ता पहले वर्ग की हैं क्योंकि हमें विदित होता है कि उनके लता मण्डप में बैठने के लिए प्रस्तर के आलिन्दक बने थे और ताम्बूलवल्ली तथा एतादृश लताएँ दूसरे वर्ग की थी।[24] कुश अथवा दर्भ पवित्र समझा जाता है और धार्मिक संस्कारों में प्रचुरता से प्रयुक्त होता है। इसके पत्ते बहुत लम्बे होते हैं जिनकी सूच्यग्र नोक की तीक्ष्णता विख्यात थी दूसरी जाति का तृण उशीर था जिसे खस कहते हैं।[25]

जलाशयों में उत्पन्न होने वाले फूलों और पौधों में मुख्य थी– नलिनी। कालिदास इसका वर्णन करते अघाते नहीं दीखते। इसके कई भेद हैं।[26] शैलाव इसी प्रकार का खूब उपजा हुआ सेवार था, जो तड़ागों पर फैलता और कमलों के साथ ओत–प्रोत हो जाता है।[27] वेतस का भी वर्णन प्राप्त होता है।[28]

जिस प्रकार भारत–भूमि से आदिम अरण्य प्रायः तिरोहित हो गये, उसी प्रकार वन्य पशुओं में से भी बहुत से गायब हो गये है। कालिदास के काल में देश अरण्यों से भरा था, जिनमें वन्य पशु स्वच्छन्द बिहार करते थे। वन्य पशुओं में जिनका नामांकन हुआ है वे हैं– पशुओं का राजा सिंह, हाथी, बाघ, शूकर (वराह), गेंडा, साँड़, भैंसा, हिमालय में घूमने वाली गाय (चमरी), हिरण (मृग), मृगी आदि। अभिज्ञान शकुन्तल में वराह का वर्णन है।[29] पक्षियों में गुध,[30] शुक,[31] नरपुंस्कोकिल,[32] चक्रवाक,[33] टिड्डियाँ, शलभो,[34] मधुकर[35] का वर्णन अभिज्ञान शकुन्तल में आया है।

वसन्त काल में माधवी फूलती है। इस ऋतु में इसका निकुंज फूलों से लद जाता है और उनके गुच्छे स्तवकों का रूप धारण करते हैं। कैलास का एक और नाम था हेमकूट। नन्दलाल की राय में हेमकूट नाम से हिमालय की वह बन्दर–पूच्छ श्रेणी भी जानी जाती थी जिसमें अलकनन्दा, गंगा, यमुना के उद्गम है, परन्तु उनका विश्वास है कि कैलास और बन्दर पुच्छ की श्रेणियों के समान संज्ञा कैलास की ही थी। कालिदास ने हेमकूट और कैलास को एक ही माना है।[36] नदियों में मालिनी,[37] रेवा अथवा गौतमी[38] आदि भोजन में तिल,[39] शर,[40] मत्स्य,[41] आदि का वर्णन अभिज्ञानशाकुन्तल में आया है। खान–पान भी पर्यावरण में सहायक तत्व आयुर्वेद मं व्यक्तियों की प्रकृति, कफ, पित या वात को प्रमुखता देने वाली मानी गयी है। कफ, पित, वात को सीधा सम्बन्ध आकाश, पृथ्वी, जल, अग्नि तथा वायु जैसे पंच तत्वों से है। ऋतुएँ भी स्वास्थ्य वर्धक हैं।

प्रारम्भिक काल में सन्तों, ऋषियों एवं शासकों ने भी प्रकृति के प्रति अत्यन्त जागरूकता दिखाई है। संसद द्वारा राज्यों में जल एवं वायु, वन तथा वन्य जीव–जन्तुओं के संरक्षण हेतु वनजीव अधिनियम 1972, जल अधिनियम–1974, वायु अधिनियम 1981 एवं पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986, राष्ट्रीय वन नीति 1988 आदि लागू है।

आज भोगवादी संस्कृति एवं बेतहासा उद्योगीकरण के चलते समूची पृथ्वी का ताप लगातार बढ़ रहा है। ऋतुचक्र गड़बड़ा गया है, परिणामतः विश्व में सुनामी, समुद्री चक्रवात आदि का तांड़व देखा जा

रहा है। आज नदियों में जल की मात्रा घट रही है, गंगा यमुना भी सुख रही है, जीव–जन्तु और वनस्पतियों की प्रजाति लुप्त होने के कगार पर है। खेतों में कीटनाशक–पदार्थों का उपयोग हो रहा है। अधिकांशतः पक्षियाँ आज लुप्त होने की स्थिति में हैं, जबकि पर्यावरण को स्वच्छ बनाने में इनका असाधारण योगदान है। पर्यावरण को दूषित करने में ग्लोबल, वार्मिंग का सबसे बड़ा जिम्मेदार अमेरिका है। इससे पृथ्वी पर जीवन का बड़ा हिस्सा प्राकृतिक आपदाओं की चपेट में आ जायेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 4.2
2. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 4.9
3. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 4.11
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 4.13
5. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 4.8
6. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 4.13
7. वही – 1.22
8. वही – 1.9
9. वही – 4.2
10. ऋग्वेद – 6.48.17
11. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 1, 2, 3, 7
12. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – पृ0 249
13. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 1–15, पृ0 27, 1.46.48
14. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – पृ0 38
15. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 1.4
16. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 4.3
17. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 4.3
18. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – पृ0 192
19. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 1.13 / 2.13 / पृ0 73
20. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – पृ0 70
21. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 1.3
22. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – पृ0 31, 137
23. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – पृ0 95

24. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – पृ0 27/1.15
25. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 2.22, पृ0 34
26. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 1.18
27. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 1.17
28. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 3.23
29. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – 2.6
30. वही, पृ0 186
31. वही, 1.13
32. वही, 6.4–10
33. वही, पृ0 110
34. वही, 1.28
35. वही, 1.20
36. वही, पृ0 237, 7
37. वही, पृ0 21–87
38. वही, 42
39. वही, 94
40. वही, 62
41. वही, पृ0 184, 206

*****

सी 20/14 नई पोखरी, पिशाचमोचन, सिगरा,
वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
मो0– 9519403908